P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-8* April- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

संस्कृति और पर्यावरण संरक्षण में सांस्कृतिक भूदृश्यों की उपादेयता : एक मूल्याङ्कन

डी. के. शाही
एसोसिएट प्रोफेसर,
भूगोल विभाग,
डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज,
देहरादून

सारांश

मानव सभ्यता और पर्यावरण के सहसंबंध का जीवंत प्रतिरूप सांस्कृतिक भूदृश्य (पवित्र वन उपवन) में देखने को मिलता है। यद्यपि पवित्र वन उपवन से सम्बद्ध सांस्कृतिक भूदृश्य सांस्कृतिक धरोहर होते हैं, परन्तु ये संस्कृति–संरक्षण और पर्यावरण–संरक्षण के महत्वपूर्ण केंद्र हैं। संस्कृति–संरक्षण के साथ–साथ पर्यावरण–संरक्षण में भी इन सांस्कृतिक भूदृश्यों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

लोक–आस्था और लोक–विश्वास के अतिरिक्त सांस्कृतिक भूदृश्य (पवित्र वन उपवन) की महिमा, गुण एवं उपयोगिता वैज्ञानिक कसौटी पर भी खरी उतरती है। पवित्र वन उपवन से युक्त सांस्कृतिक भूदृश्य अपने आप में एक संपूर्ण पारिस्थितिकीय–तंत्र (इको सिस्टम) का निर्माण करते हैं, उनका पोषण करते हैं और उन्हें संरक्षण प्रदान करते हैं। सांस्कृतिक भूदृश्य के रूप में पवित्र वन उपवन, पौधों, बृक्षों व उनपर निर्भर अन्य जीवधारियों के अस्तित्व को बनाए रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और इस तरह पर्यावरण में संतुलन बनाए रखने का कार्य करते हैं। सांस्कृतिक भूदृश्य (पवित्र वन उपवन) प्राकृतिक संपदा स्रोत के रूप में महत्वपूर्ण तो रहते ही हैं, इनकी उपयोगिता प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखने में भी होती है।

स्थानीय समाज जीवन में सांस्कृतिक भूदृश्यों (पवित्र वन उपवन) का विशेष महत्व रहा है। इसके साथ ही सांस्कृतिक भूदृश्य प्रकृति से जुड़े संस्कारों को चिरंतन और शाश्वत बनाएरखने का कार्य करते रहे हैं, उन संस्कारों के माध्यम से सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक मूल्यों का बोध करते रहे हैं और आज भी हमारी सभ्यता और संस्कृति को दिशा प्रदान करने का कार्य कर रहे हैं।

वर्तमान समय में वैश्विक संस्कृति ह्रासोन्मुख है और पर्यावरण विघटन की ओर अग्रसर है। इस दौर में मानव भौतिक रूप से जितना समृद्ध होता जा रहा है, सांस्कृतिक और पर्यावरणिक दृष्टि से उतना ही विपन्न होता जा रहा है। भारतीय संस्कृति में भी आज तीव्र बदलाव आ रहा है, मान्यताएं बदल रही हैं, किंतु सांस्कृतिक भूदृश्यों (पवित्र वन उपवन) के प्रति लोगों की आस्था और विश्वास ज्यों–का–त्यों बना है।

सांस्कृतिक भूदृश्य (पवित्र वन उपवन) हमारी श्रद्धा, आस्था और विश्वास को आधार प्रदान करते हैं। ऐसे में संस्कृति–संरक्षण, पर्यावरण–संरक्षण का माध्यम हो सकता है और पर्यावरण–संरक्षण, संस्कृति–संरक्षण का। इन सांस्कृतिक परंपराओं और प्राकृतिक धरोहरों के संरक्षण प्रदान कर संस्कृति और पर्यावरण दोनों को बचाए रखना संभव है।

प्रस्तुत शोध–पत्र के माध्यम से सुरकुट पर्वत स्थित सिद्धपीठ सुरकंडा देवी मंदिर के भौगोलिक परिवेश में स्थित सांस्कृतिक भूदृश्य (पवित्र वन उपवन) का परिदृश्य प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है और उनकी वर्तमान उपादेयता का मूल्याङ्कनका प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द : सांस्कृतिक भूदृश्य, पर्यावरण संरक्षण, लोक–आस्था. पवित्र वनउपवन, सुरकुट पर्वत, सुरकंडा देवी सिद्धपीठ।

प्रस्तावना

प्राचीन काल से प्रकृति संरक्षण गिरिवासी–वनवासी (आदिवासी) आदि पारंपरिक समुदाय की संस्कृति का एक अभिन्न अंग रहा है। गिरिवासी–वनवासी (आदिवासी) आदि पारंपरिक समाज अपने प्राकृतिक भूदृश्य से प्रत्यक्ष जुड़ा होता है। इनके सांस्कृतिक भू दृश्य में उनके प्राकृतिक भूदृश्य (वन, बाग, उपवन, वाटिका, सर, कूप, वापी,) आदि का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इसके संरक्षण और संवर्धन के मूल में उनकी प्रकृति पर निर्भरता एवं उसके प्रति उनका सम्मान है।

प्राचीन काल से ही ऐसे पारंपरिक समुदाय के द्वारा विभिन्न पौधों, जीव–जन्तुओं, यहां तक कि प्राकृतिक स्थान जैसे झील, पर्वत, नदी इत्यादि को पवित्र मानकर संरक्षित किया जाता रहा है। विभिन्न क्षेत्रों में वनों, जलाशयों को स्थानीय देवी–देवताओं को समर्पित करने की भी परंपरा भी रही है। ऐसे समाज के धार्मिक अनुष्ठानों में भी जंगली पशु–पक्षी की पूजा देखने को मिलती है।

पवित्र वन उपवन गिरिवासी–वनवासी (आदिवासी) आदि पारंपरिक समाज से जुड़ा प्राकृतिक भूदृश्य है, जिसमें स्थानीय देवी देवताओं का वास (निवास) माना जाता है। इस धार्मिक आस्था और विश्वास के कारण गिरिवासी–वनवासी (आदिवासी) आदि पारंपरिक समाज के द्वारा, परम्परागत रूप से, अपने आस–पास के वनों को पवित्र मानते हुए उनका संरक्षण किया जाता है।

साहित्यावलोकन

सांस्कृतिक भूदृश्य के क्षेत्र में सुविख्यात चिंतक केन टेलर का मानना है कि सांस्कृतिक भूदृश्य 'संस्कृति और प्रकृति के बीच एक सेतु है'। उन्होंने सांस्कृतिक भूदृश्य के विचार और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण के संदर्भ में इसके महत्व का विस्तृत विवरण दिया है। (Ken Taylor, 2011) यूनेस्को के द्वारा प्रस्तुत सन्दर्भ में सांस्कृतिक भूदृश्य को प्रकृति औरमानव के कार्यों के रूप में परिभाषित किया जाता है (UNESCO, 1992) और सांस्कृतिक भूदृश्य को मानव समाज और मानव बसाव का प्रतिफल के रूप में प्रस्तुत किया गया है। (CE, 2000) किसी भी क्षेत्र में स्थानीय सांस्कृतिक भूदृश्य, पर्यावरणीय संरक्षण और सतत विकास की कल्पना को विश्वदृष्टि प्रदान करता है। सांस्कृतिक भूदृश्य के संरक्षण के बिना पर्यावरणीय संरक्षण स्थायी नहीं हो सकता है। एजेंडा 2030 में भी सतत विकास के लिए सांस्कृतिक विरासत कि भूमिका को स्वीकार किया गया है। लक्ष्य 11. में यह स्पष्ट रूप से उल्लिखित है।

विभिन्न पर्यावरणविद और सामाजिक मानवविज्ञानीकों ने भी इस सोच को एक सिद्धांत के रूप में स्वीकार किया है। वास्तव में, उन सब ने मानव–पर्यावरण संबंध में संस्कृति और सांस्कृतिक भूदृश्य के संरक्षण पर जोर दिया है। (Descola and Palsson 1996, Milton 1996,Awuah-Nyamekye 2009) उन सब का मानना है कि सतत विकास की उपलब्धि में संस्कृति की महत्वपूर्ण भूमिका है। एक अन्य पर्यावरणविद, प्लिंजर भी पर्यावरण के संवर्धन के लिए सांस्कृतिक भूदृश्य के संरक्षण को महत्वपूर्ण मानते हैं। सांस्कृतिक भूदृश्य के संदर्भ में प्लिंजर शास्त्रीय संरक्षण के दृष्टिकोण को संदर्भित करते हैं। (Plieninger, 2014)

पर्यावरण संरक्षण के संदर्भ को उद्धृत करते हुए कैम्पोलो ने भी सांस्कृतिक भूदृश्य के महत्व को संदर्भित किया है। इस संदर्भ में उन्होने प्रकृति के साथ बेहतर सामंजस्य रखने वाले समाज के पुनर्निर्माण के महत्व पर जोर दिया है। (Campolo, 2016) इस सन्दर्भ में बैगनरा मिलान का तर्क भी इस धारणा पर केंद्रित हैं कि केवल एक समग्र दृष्टिकोण के माध्यम से ही सांस्कृतिक भूदृश्य को बेहतर ढंग से समझा और संरक्षित किया जा सकता है। (Bagnara Milan, 2016) बैगनरा मिलान पर्यावरण और सांस्कृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग पर बल देते हैं और किसी निश्चित (सदर्भित) क्षेत्र में आर्थिक और सांस्कृतिक गतिविधियों के सफल संगठन पर जोर देते हैं। (Bagnara Milan, 2016)

मूर ने भी सतत विकास को बढ़ावा देने के लिए, सांस्कृतिक भूदृश्य को एक समग्र परिप्रेक्ष्य पुनर्परिभाषित करने और सैद्धांतिक संदर्भ प्रस्तुत करने का आग्रह किया है। (Moore, 2016) प्रसिद्ध पर्यावरणविद नोका ने भी सांस्कृतिक भी सांस्कृतिक भूदृश्य के बहुआयामी लाभों और उसके महत्व पर प्रकाश डाला है। (Nocca, F. 2017) उन्होंने पर्यावरण संरक्षण के सन्दर्भ में अच्छी परम्पराओं और उचित प्रथाओं का विश्लेषण किया है जो विरासत संरक्षण / उत्थान के लिए आवश्यक है। (Nocca, F. 2017) प्रस्तुत शोध प्राचीन भारतीय परम्पराओं के सन्दर्भ में सांस्कृतिक भूदृश्य के महत्व को पुनः परिभाषित करने का प्रयास है।

अध्ययन की परिकल्पना

उपलबद्ध अध्ययन (साहित्य समीक्षा) की पृष्ठभूमि और एकल अध्ययन के आधार पर प्रस्तुत शोध के अंतर्गत, निम्नलिखित परिकल्पना विकसित की गयी है।

1. गिरिवासी–वनवासी (आदिवासी) आदि पारंपरिक समुदाय का प्रकृति के साथ निकट संबंध होता है। अनादि काल से इस समाज का उसके प्राकृतिक परिवेश के साथ विकसित यह संबंध एक विलक्षण संस्कृति (परंपरा) को जन्म देती है, जो पवित्र वनों, उपवनों के संरक्षण, संवर्धन और रखरखाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
2. पवित्र वनों, उपवनों का संरक्षण, संवर्धन और रखरखाव, ऐतिहासिक दृष्टि से विकसित सामाजिक मूल्यों, सांस्कृतिक मान्यताओं (प्रथाओं) और धार्मिक विश्वासों (आस्था) के साथ आबद्ध होती है। यह लोक व्यवहार के रूप में परिणत होती है और जैव विविधता के लिए विनाशकारी प्रवृत्ति (क्रिया–कलाप) को नियंत्रित करने का कार्य करती है।
3. पवित्र वन, उपवन स्थानीय देवी देवताओं के साथ जुड़ी अवधारणाओं, विश्वासों, किंवदंतियों और मिथकों के साथ जुड़ी होती हैं।
4. पवित्र वन एक समृद्ध विविधता को आश्रय प्रदान करते हैं, आधुनिक प्रवृत्तियों के विकास के कारण इन पवित्र वन अस्तित्व के संकट का सामना कर रहे हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

पवित्र वनों, उपवनों के सन्दर्भ में प्रस्तुत अध्ययन के निम्न लिखित उद्देश्य हैं।

1. सुरकुट पर्वत स्थित सिद्धपीठ सुरकंडा देवी मंदिर के पवित्र वन उपवन का पर्यावरण (पवित्र उपवनों की पारिस्थितिकीय आयाम) सहित सामाजिक–सांस्कृतिक सर्वेक्षण करना।
2. जैव विविधता संरक्षण में पवित्र वन उपवन के महत्व का अध्ययन करना
3. वनवासी या गिरिवासी (पारंपरिक समुदाय) के लिए पवित्र वन उपवन सामाजिक–आर्थिक और सांस्कृतिक व धार्मिक महत्व का अध्ययन करना।

4. सुरकुट पर्वत स्थित सिद्धपीठ सुरकंडा देवी मंदिर के पवित्र वन उपवन से जुड़ी परंपराओं, किंवदंतियों, लोकगीतों का अध्ययन करना।
5. प्रकृति संरक्षण और संवर्धन के सन्दर्भ में सिद्धपीठ सुरकंडा देवी मंदिर की भूमिका का विस्तृत अध्ययन करना, जिनको पवित्र वन उपवन समर्पित रहे हैं।
6. प्रकृति संरक्षण के सन्दर्भ में स्थानीय परंपरा की भूमिका का अध्ययन करना। व्यवहारिक पर्यावरण अध्ययन के साथ पवित्र वन उपवन की अवधारणा को संदर्भित करने का प्रयास करना।
7. पवित्र वन उपवन के अस्तित्व के समक्ष उपस्थित चुनौतियों का अध्ययन करना। वनवासी या गिरिवासी (पारंपरिक समुदाय) को पवित्र वन उपवन के संरक्षण में आ रही समस्याओं का अध्ययन करना
8. प्रकृति संरक्षण की आधुनिक प्रणालियों में पवित्र वन, उपवन की परंपरा को सम्मिलित करने की संभावना का पता लगाना। एवं इस विषय के सन्दर्भ में आगे अध्ययन के लिए सुझाव देना।

विधितंत्र

वर्तमान अध्ययन प्राथमिक तथा द्वितीय स्रोत से प्राप्त सूचनाओं पर आधारित है। प्रस्तुत अध्ययन में सुरकुट पर्वत स्थित सिद्धपीठ सुरकंडा देवी मंदिर पवित्र वन क्षेत्र को शामिल किया गया हैं।

1. प्राथमिक आंकड़ों का संग्रहण विस्तृत क्षेत्र सवेक्षण के द्वारा किया गया है, इस उद्देश्य के लिए (आंकड़ों के संग्रहण के लिए) सुरकंडा देवी मंदिर पवित्र वन क्षेत्र का एकल अध्ययन, सूचनाओं का संग्रह, स्थानीय लोगों के प्रथागत अधिकार व्यवहार, उल्लेखनीय क्रियाकलाप तथा समुदाय आधारित संसाधन प्रबंधन से सम्बन्धित ज्ञान को एकत्रित और संकलित किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में सूचनाओं के संग्रह के लिए घटना आधारित अध्ययन, अवलोकन, अनौपचारिक साक्षात्कार, विभिन्न हितधारकों (स्थानीय लोगों) के दृष्टिकोण, स्थानीय समुदाय से विचार–विमर्श और अन्य सहभागिता आधारित विधियों का प्रयोग किया गया है।
2. द्वितीय स्रोत से प्राप्त सूचनाओं के अंतर्गत पवित्र वन और समुदाय आधारित प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन से संबंधित विभिन्न प्रकार के दस्तावेजों जैसे रिपोर्ट, समाचार पत्रों, शोध ग्रन्थों, शोध पत्रों, प्रोजेक्ट के रिपोर्ट दस्तावेज, संन्दर्भ ग्रन्थ, आदि की सूचनाओं पुस्तिकाओं तथा इण्टरनेट से प्राप्त समुदाय आधारित प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन के सम्बन्धित दस्तावेजों से संग्रहण किया गया।

सामान्य विवरण और विश्लेषण

वैज्ञानिक आधार पर कहा जा सकता है कि पवित्र वन उपवन ऐसे भूदृश्य (लैंडस्कैप) हैं, जिनमें प्राकृतिक वनस्पति, मानव सहित जीवन के अन्य रूप और भौगोलिक स्वरुप सम्मिलित होते हैं, मानव समुदाय उनका संरक्षण इस विश्वास के साथ करता है कि उन्हें प्राकृतिक स्वरूप में सुरक्षित रखना, उनकी पवित्रता को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। पवित्र वनों उपवनों में वनस्पतियां प्राकृतिक या लगभग प्राकृतिक (natural or near natural) स्वरुप में होती हैं, जिनका संरक्षण स्थानीय समुदाय सामाजिक प्रतिबंधों के माध्यम से करते हैं। इस स्थान को स्थानीय लोग अदृश्य ईश्वरीय शक्ति से जुड़ा मानते हैं, अतरू इसकी पवित्रता अक्षुण्ण रखने का प्रयास करते हैं। सामान्यतः पवित्र वनों में प्रवेश निषिद्ध होता है। निश्चय ही इनमें शिकार करना और लकड़ी काटना भी प्रतिबंधित होता है। इनके भीतर अन्य विकास संबंधी गतिविधियां भी सीमित रहती हैं। संसार की विभिन्न संस्कृतियों में ऐसे प्रतिबंधों का अस्तित्व रहा है जिनसे पर्यावरण के साथ मनुष्य के संबंधों का संचालन, नियमन होता रहा है।

धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक दृष्टि से पवित्र वन, बाग, उपवन, वाटिका को अनेक वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

पवित्र वन उपवन का वर्गीकरण

स्वरुप	विवरण
पवित्र पेड़ (एकल पेंड)	जहां स्थानीय देवी–देवताओं (ग्राम देवी या देवता) का निवास रहता हैं, पारंपरिक रूप से इन स्थानों पर पीपल आदि के एकल पेड़ पाए जाते है। ग्रामीणों द्वारा अक्सर इस तरह के पेड़ों की पूजा अर्चना की जाती है। सामान्यतः ऐसे पेंड एक प्राथमिक प्रतीक का प्रतिनिधित्व करते हैं। देवी या देवता की पूजा किसी मूर्त वस्तु या पत्थर की शिला के रूप में की जाती है।
मंदिर के बाग या उपवन	पारंपरिक रूप से एक मंदिर के चारों ओर बाग या उपवन लगे होते हैं, इन वनों में विभिन्न देवी–देवताओं का मंदिर होता है, बाग या उपवन, मंदिर की पूजा आदि की जरूरतों को पूरा करते हैं और सामान्यतरू मंदिर के द्वारा संरक्षित होते हैं।
पितृ वन	गिरिवासी–वनवासी (आदिवासी) आदि पारंपरिक समुदाय जिनमें पूर्वजों की पूजा करने की मान्यता है, उनके द्वारा अपने पूर्वजों को समर्पित पारंपरिक पितृ वन–उपवन, इन वनों में पूर्वजों की आत्मा का निवास माना जाता है।
श्मशान के वन उपवन	अंतिम संस्कार के स्थान या श्मशान की भूमि पर या उसके चारों ओर वन या उपवन विकसित होते हैं। समाधी स्थल के पास या कब्रगाह (दफनाने की जगह) के चारों ओर भी पवित्र वन, उपवन पाए जाते हैं।
पर्वत कुञ्ज	पर्वत शिखर पर स्थित कुञ्ज (पेड़ों के झुरमुट), ऐसे वन उपवन समुद्र स्तर से ऊपर 1,000मीटर या उससे ऊपर स्थित होते हैं। आमतौर पर ऐसे वन पहाड़ की चोटी पर या किसी गुफा के पास

	पाए जाते हैं और सामान्यतः प्राचीन हालत (मानवीय हस्तक्षेप से अछूते) में रहते हैं। यहां वर्ष में एक या दो बार केवल वार्षिक अनुष्ठान के लिए लोग एकत्र होते हैं।
निकुंज	कृषि भूमि पर एक छोटे से क्षेत्र में स्थित एकल पेंड़ या पवित्र पेड़ों का समूह, जहां धार्मिक पूजा के लिए केवल अस्थायी मंदिर निर्मित होता है, पवित्र क्षेत्र का स्थायी या अस्थायी सीमांकन किया गया होता है और पवित्र स्थान के आसपास भूमि पर खेती की जाती है।
जलश्रोतों के वन	सर, कूप, वापी व् अन्य जल निकायों (सोता, धारा आदि) के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए विकसित और सरक्षित वन उपवन, जलश्रोतों के संवर्धन के लिए इन वनों संरक्षित किया जाता है।

एम गाडगिल, एस चटर्जी और रॉय बर्मन आदि के द्वारा प्रस्तुत पवित्र पेड़ों के वर्गीकरण के आधार पर.

साहित्यावलोकन

उत्तराखंड में सांस्कृतिक भूदृश्य के सन्दर्भ में पवित्र उपवनों से संबंधित अध्ययन की कमी है। अधिकतर अध्ययन में विषय के अध्ययन के प्रति एक व्यवस्थित दृष्टिकोण की कमी पाई जाती है। यद्यपि कई शोधकर्ताओं ने पवित्र उपवनों की खोज में उत्तराखंड के गिरी प्रदेशों में स्थित वन, बाग, उपवन, वाटिका का गहन अध्ययन किया है और उसका विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है, परन्तु व्यवहारिक पर्यावरण अध्ययन की दृष्टि से अभी भी गहन शोध की आवश्यकता है।

इन पवित्र उपवनों के अतिरिक्त थलकेदार, नकुलेश्वर और हाट काली (पिथौरागढ़) के वनों का अध्ययन राष्ट्रीय वानस्पतिक अनुसंधान संस्थान (NBRI), लखनऊ के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है। शोधकर्ताओं सूची लंबी है जिनमें हर्ष सिंह, तारिक हुसैन और और राष्ट्रीय वानस्पतिक अनुसंधान संस्थान (NBRI), लखनऊ की प्रियंका अग्निहोत्री के कई शोध प्रकाशित हुए हैं। इनके द्वारा उत्तराखंड (पिथौरागढ़) में अब तक कम ज्ञात दो पवित्र उपवनों का वर्णन किया है। इनके द्वारा इस क्षेत्र में जैव विविधता सर्वेक्षण के क्रम में स्थानीय समुदायों द्वारा सरक्षित और संवर्धित अवशेष वनस्पति के घने जंगलों सूचना दी गयी है। शोधकर्ताओं ने हरियाली देवी (चमोली), चिपलाकेदार (असकोट में वन्यजीव अभयारण्य, पिथौरागढ़), तारकेश्वर (बिनसर), तपोवन, नाग देव, गोल देव, मायावती (अल्मोढ़ा), कोट, नंदीसैन, पाब्बो और देवाल आदि पर शोध प्रस्तुत हैं। अन्य समृद्ध वनों में जाखनी पवित्र वन (गंगोलीहाट) चंडिका देवी पवित्र वन, चांडक (पिथौरागढ़–गंगोलीहाट) सम्मिलित हैं। परन्तु अभी भी बहुत कुछ शेष है वस्तुतः पवित्र उपवनों की सूची अंतहीन है। गवर्नमेंट पी जी कॉलेज कोटद्वार के सविता बिष्ट और जे.सी. घिल्डियाल का अनुमान है कि उत्तराखंड में धर्म और धार्मिक मान्यताओं पर आधारित 1,000से अधिक ऐसे पवित्र उपवन हैं, जिनका अध्ययन हो सकता है।

ज्यादातर अध्ययन वानस्पतिक अनुसंधान से सम्बंधित हैं जिनमें वनस्पतियों की प्रजातियों (वनस्पतियों की विविधता) औषधीय पौधों की प्रजातियों की सूचना मिलती है। परन्तु समन्वित दृष्टिकोण से पवित्र वन उपवनों के अध्ययन में अभी बहुत कुछ शेष है।

पवित्र वनों, उपवनों का धार्मिक एवं सामाजिक–सांस्कृतिक महत्त्व;

देवी–देवताओं की समर्पित वनों का गिरिवासी–वनवासी (आदिवासी) आदि पारंपरिक समाज के धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन से गहरा संबंध होता है। इन वनों में स्थानीय देवी–देवताओं को प्रसन्न करने के लिए वार्षिक अनुष्ठान और समारोह आयोजित किए जाते हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि इन वनों में उपस्थित देवी–देवताओं के आर्शीवाद से समाज के सुख–समृद्धि की अभिवृद्धि होती है, वहीं दूसरी ओर इन वनों को किसी भी प्रकार का नुकसान पहुंचाने वाला देवी–देवताओं के कोप का भाजन बनता है।

धार्मिक अनुष्ठानों के अतिरिक्त इन वनों का सामाजिक–सांस्कृतिक महत्त्व भी होता है।पारंपरिक समाज के द्वारा इन वनों के पास सामूहिक रूप से अनेक उत्सव या त्यौहार मनाया जाता है। सामाजिक जीवन के सभी पक्ष आस्था के इन केन्द्रों के साथ जुड़े होते हैं।

पवित्र वनों, उपवनों का पारिस्थितिक महत्त्व;

सामान्यतः छोटे–छोटे परिधि क्षेत्र में फैले इन वनों में बहुतायत में विभिन्न पौधों और जीव जंतुओं की प्रजातियां पायी जाती हैं। पवित्र उपवनों के भीतर विभिन्न प्रकार के पारिस्थितिक तंत्र का विकास होता है जो अपने अस्तित्व के लिए एक दूसरे पर निर्भर होते हैं, और विभिन्न खाद्य श्रृंखला में आबद्ध होते हैं।

इन वनों में पौधों, जीव–जन्तुओं और पर्यावरण के पारस्परिक क्रियाओं से असंख्य सूक्ष्मआवासों (Micro-habitat) का निर्माण होता है जिनमें विविध प्रकार के जीवधारी निवास करते हैं। इनमें अलग पौधों, पशुओं, पक्षियों और सूक्ष्म जीवों, की विविधता पाई जाती है।

यह जैव विविधता उस परिवेश की पास्थितिकी का महत्वपूर्ण अंग होता है। यह जीवन को संरक्षण, संवर्धन और सहयोग प्रदान करता है। हमारी सभ्यताओं और संस्कृतियों के अस्तित्व और विकास के लिए इस जैव विविधता का संरक्षण आवश्यक है। इन क्षेत्रोंध्स्थलों की गिनती जैव–विविधता से सम्पन्न 'लोकल हॉटस्पॉट्स' में होती हैं। वन क्षेत्रों बाहर, अद्भूत जैव–विविधता के संरक्षण का श्रेय इन्हीं पवित्र उपवनों को जाता है।

इन पौधों और जीव जंतुओं की अनेक प्रजातियां जिनका अस्तित्व संकट में है अथवा जो विलुप्त होने के कगार पर हैं उनके लिए पवित्र वन, उपवन शरणस्थली का कार्य करते हैं। उत्तराखंड के पवित्र वनों में अनेक दुर्लभ पौधों की प्रजातियां पाई जाती हैं। इनमें अनेक स्थानिक और संकटग्रस्त प्रजातियां भी हैं।

जैव विविधता के भंडार के अतिरिक्त ये पवित्र वन, उपवन अनेक बहुमूल्य सेवायें प्रदान करते हैं जिनसे आस–पास के निवासी लाभान्वित होते हैं। इन वनों,

उपवनों में खाने योग्य और औषधीय महत्त्व की प्रजातियां भी पाई जाती हैं। पीढ़ियों से यहां निवास करनेवाला गिरिवासी–वनवासी (आदिवासी) आदि पारंपरिक समाज इनका प्रयोग विभिन्न रोगों के उपचार के लिए करता आया है।

इसके अतिरिक्त ये पवित्र वन, उपवन स्थानीय जलवायु (micro climate) और स्थानीय जलचक्र को प्रभावित भी करते हैं। ये पवित्र वन, उपवन वर्षाजल के बहाव को कम कर, मिट्टी में उसका अवशोषण बढ़ाने का काम करते हैं जिसके कारण स्थानीय जल स्रोतों में वर्ष भर पानी उपलब्ध रहता है। ये पवित्र वन, उपवन मिट्टी के क्षरण को भी कम करने का काम करते हैं व इसके अतिरिक इन वनों से स्थानीय भूदृश्य सुन्दर (आकर्षक) दृ श्य धारण करते हैं। शैक्षणिक कार्यों एवं पारिस्थितिकीय–पर्यटन की दृष्टि से भी पवित्र वन, उपवन उपयोगी होते हैं।

अध्ययन क्षेत्र

यह स्थान एक समृद्ध और परस्पर सम्बद्ध प्रकृति और संस्कृति का जीवंत प्रतिमान है। सुरकंडा देवी के मंदिर के कारण यह उत्तराखंड का एक पवित्र स्थान है। यह उत्तराखंड के टिहरी–गढ़वाल जनपद में धनौल्टी की पहाड़ी के शिखर पर स्थित, शान्तिपूर्ण स्थल है। इस स्थान की भौगोलिक स्थिति $78^0$17'24"E और $30^0$24'30"N है। यह स्थान 2757 मीटर या 9976 फीट की ऊंचाई पर है। इस स्थान के पास के हिल स्टेशन धनोल्टी (8 किमी), चंबा (22 किमी) और मसूरी (33किमी) की दूरी पर स्थित हैं।

यह स्थान उत्तर में हिमालय और दक्षिण में स्थित कुछ शहरों (उदाहरण के लिए देहरादून और ऋषिकेश) सहित आसपास के क्षेत्र का एक सुंदर दृश्य उपस्थित करता है।

ग्रीष्म ऋतु में, यह पहाड़ी क्षेत्र शांत और शीतल रहता है, जबकि सर्दियों ठंड का अनुभव किया जाता है। शीत ऋतु में वर्षा के साथ हिमपात (बर्फबारी) भी होती है, अन्यथा पहाड़ी के ऊपर धुंध और कोहरे का आवरण रहता है। यहां गर्मियों में तापमान 32^0से 37^0 सेल्सियस रहता है, जबकि सर्दियों में तापमान 7^0सेल्सियस और 1^0सेल्सियस के बीच में रहते हैं (धनौल्टी) । कभी कभी न्यूनतम तापमान शून्य से निचे भी चला जाता है। चूंकि सुरकंडा का मंदिर लगभग दस हजार फुट की ऊंचाई पर स्थित है, इसलिए यहां मसूरी–धनौल्टी से भी ज्यादा बर्फ गिरती है। मार्च की शुरुआत तक यहां बर्फ जमी मिलती है। जुलाई से सितंबर तक यहां बरसात का मौसम रहता है और इस समय सतत बूंदा–बांदी होती है।

वनस्पतियां व जीव–जंतु

यहां के प्राकृतिक भूदृश्य में विविधतापूर्ण प्रकृति पाई जाती है। यह क्षेत्र घने जंगल घिरा हुआ है। यहां मिश्रित प्रकार की (विविध स्तरों की) वनस्पतियां पाई जाती हैं, जिनमें पर्वतीय वनस्पतियों की कई प्रजातियां, जंगली और स्थानिक पौधे, विभिन्न रंगों के जंगली फूल और औषधीय वनस्पतियां पाई जाती हैं। यहां के जंगल देवदार व अन्य कॉनीफर, ओक और बुरांस (rhododendrons) के वृक्षों से भरपूर हैं। यहां जीव–जन्तुओं की कुछ दुर्लभ प्रजातियां और कई लुप्तप्राय जानवर भी पाए जाते हैं।

आध्यात्मिक महत्व;

यह स्थान गढ़वाल के तीन देवी मंदिरों, सुरकंडा, चंद्रबदनी और कुंजापुरी के समुच्चय का अंग है। सिद्धपीठों में मां सुरकंडा का महातम्य सबसे अलग है। धार्मिक दृष्टि से इस स्थान को पुरे गढ़वाल क्षेत्र में सर्वोच्च स्थान है। प्राचीन हिन्दू धर्मग्रंथों एवं पुराणों में इस स्थान का विस्तृत उल्लेख मिलता है। पौराणिक कथाओं के अनुसार सुरकुट पर्वत पर मां सती का सिर गिरा तभी से इस स्थान का नाम सुरकंडा पड़ा। जिससे सुरकंडा देवी के मंदिर में देवी के सिर की पूजा की जाती है।

विभिन्न अवसरों पर यहां के लोग देवी की आराधना करते हैं। धार्मिक मान्यता है कि देवी सुरकंडा सभी कष्टों व दुखों को हरने वाली हैं। मान्यता है कि नवरात्र व गंगादशहरे के अवसर पर देवी के दर्शनों से मनोकामना पूर्ण होती है। यही कारण है कि सुरकंडा मंदिर में प्रतिवर्ष गंगा दशहरे के मौके पर विशाल मेला लगता है।

सुरकंडा देवी के मंदिर की एक खास विशेषता यह भी है कि यहां श्रद्धालुओं को प्रसाद के रूप में थुनेर (वानस्पतिक नाम टेक्सस बकाटा, स्थानीय नाम रौंसली) की पत्तियां दी जाती हैं। इस क्षेत्र में इसे देववृक्ष का स्थान प्राप्त है। थुनेर (रौंसली) के पत्तों को भक्तजन अपने घरों में रखते हैं। यह औषधीय गुणों भरपूर होता हैं। धार्मिक मान्यता के अनुसार इन पत्तियों से घर में सुख समृद्धि आती है। थुनेर (रौंसली) दुर्लभ प्रजाति का वृक्ष है धार्मिक महत्व के कारण स्थानीय लोगों के द्वारा इस पेड़ की लकड़ी को इमारती या दूसरे व्यावसायिक उपयोग में नहीं लाया जाता है।

सुरकुट पर्वत का भू–सांस्कृतिक भूदृश्य

भौगोलिक स्थिति

सुरकुट पर्वत टिहरी गढ़वाल जनपद में जौनपुर प्रखंड के अंतर्गत स्थित है। (जनपद – टिहरी गढ़वाल, प्रखंड – जौनपुर) यह स्थान प्राकृतिक और धार्मिक महत्व का केंद्र है।

प्राकृतिक भूदृश्य

गढ़वाल हिमालय का सुरकुट पर्वत, यह स्थान अनेक छोटी–छोटी पहाड़ियों के मध्य स्थित है। भौगोलिक दृष्टि से यह मध्य हिमालय में स्थित एक पर्वत शिखर का भूदृश्य उपस्थित करता है।

प्राकृतिक वातावरण

यह स्थान समुद्र तल से 2757 मीटर की ऊचांई पर स्थित है। यहां की प्राकृतिक वनस्पति में बांज, बुरांस, मोरू व खर्सु के साथ ही संकटग्रस्त थुनेर के पेड़ भी शामिल हैं।

सांस्कृतिक भूदृश्य

सुरकुट पर्वत पर प्रसिद्ध सिद्धपीठ मां सुरकंडा का मंदिर स्थित है। यह मंदिर सुरकुट पर्वत के शिखर पर स्थित है। सिद्धपीठों में मां सुरकंडा का महातम्य सबसे अलग है। पौराणिक मान्यता है कि, यहां सती का सिर गिरा था।

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-8* April- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

प्राकृतिक और सांस्कृतिक महत्व

प्राकृतिक वन उपवन से सम्बद्ध यहां की संस्कृति, प्रकृति और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की संवाहक है। यहां देवी के प्रसाद के रूप में थुनेर की पत्तियों को दिया जाता है। यह प्रकृति की गरिमा का जीवंत प्रमाण है।

पर्यवरण ह्रास

यहां के जंगलों में पहले थुनेर के पेड़ों की बहुतायत थी, परन्तु अब इस दुर्लभ वनस्पति के पौधे सिमट कर बस यहीं शेष रहे गए हैं। आज जिस तेजी से खत्म जंगल हो रहे हैं, उससे लगता है कि वह दिन दूर नहीं जब बड़ी तादाद में यहां पाई जाने वाली बहुमूल्य जैव संपदा नष्ट हो जाएगी, भविष्य में जिसकी भरपाई असंभव होगी।

सुरकुट पर्वत के सांस्कृतिक भूदृश का महत्व

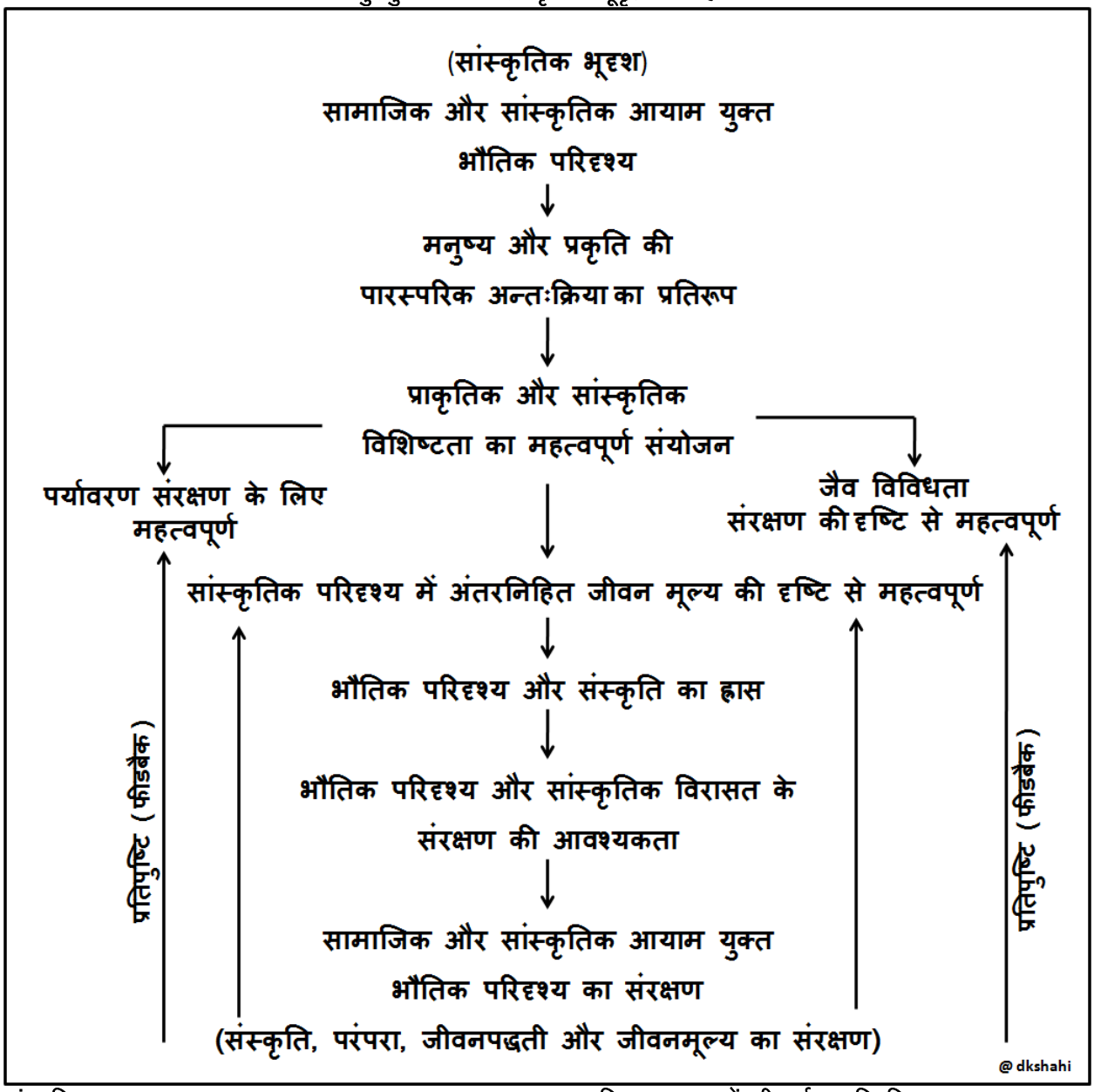

सांस्कृतिक भूदृश

जर्मन विद्वान ऑटो स्लुटर और 1920 अमेरिकी भूगोलवेत्ता कार्ल सवार की संकल्पना पर आधारित, और गाडगिल, चटर्जी और रॉय बर्मन आदि की संकल्पना पर परिस्कृत एवं विकसित.

पवित्र वन उपवनों की वर्तमान स्थिति

यह अत्यंत दुख और चिंता का विषय है कि हमारे आधुनिक जीवन के प्रभाव से प्रकृति संरक्षण की प्राचीन परंपरा धीरे–धीरे क्षीण होती जा रही है जिसके फलस्वरूप जैव–विविधता बहुल वनों, उपवनों के क्षेत्र नष्ट हो रहे हैं। यद्यपि अलग–अलग क्षेत्रों में इन वनों के

विघटन के लिए अलग–अलग कारक उत्तरदायी हैं, परंतु सभी का संबंध किसी न किसी रूप में हम से और हमारी बदलती प्रबृति से रहा है।

आधुनिक संस्कृति के बढ़ाते प्रभाव के कारण, पवित्र वनों प्रति समाज की आस्था और विश्वास (इनसे जुड़ी मान्यताओं) का क्षरण हो रहा है। इससे प्रारंभिक प्रकृ ति पूजा का स्वरूप धीरे–धीरे बदलने लगा है। अब सदियों से चली आ रही परंपरा को अंधविश्वास के रूप में देखा जाने लगा है। सामाजिक मूल्यों और मान्यताओं में कमी के कारण इनका संरक्षण स्वयं नहीं संभव हो रहा है जिससे इन वनों के विघटन की प्रक्रिया तेज हो गई है। इससे, इनके सकारात्मक प्रभाव में कमी आ रही है और नकारात्मक प्रभावों में बृद्धि हो रही है।

व्यापारिक वानिकी के तीब्र विकास और आधुनिक वन प्रबंधन की नीतियों के कारण भी पारंपरिक गिरिवासी–वनवासी (आदिवासी) आदि समाज का वनों उपवनों से संबंध विच्छेद हुआ है, जिसके कारण वनों से आवृत अनेक स्थानों पर वन उपवनों पूर्ववत संरक्षण संभव नहीं हो रहा है। आज उनकी संख्या, उनका आकार और उनसे जुडी जैव विविधता बड़ी तेजी से संकुचित होती जा रही है। सदियों पुराने घने पवित्र उपवन विरल जंगलों में परिवर्तित होते जा रहे हैं। इन जंगलों में अनेक स्थानों पर विघटित पवित्र वनों उपवनों में विजातीय (exotic) पौधों की प्रजातियां तेजी से फैलती जा रही हैं जिनके फलस्वरूप इन वनों में उपस्थित देशज प्रजातियां धीरे–धीरे लुप्त हो रही हैं। इससे इन वनों की जैवविविधता का ह्रास हो रहा है।

प्राकृतिक पर्यावरण का क्षरण, इससे जुड़ी संस्कृ ति के ह्रास का कारण बन रहा है। इससे न केवल प्रकृति प्रभावित हो रही है, बल्कि संस्कृति भी प्रभावित हो रही है।

संरक्षित प्रजाति का वृक्ष, थुनेर

थुनेर संरक्षित प्रजाति का वनस्पति है। इसका वैज्ञानिक नाम टैक्सस बकाटा (Taxus Baccata) है। अंग्रेजी में इंग्लिश यू के नाम से जाना जाने वाला यह पेड़ दुनिया भर में विशेषकर उत्तरी यूरोप से लेकर उत्तरी अफ्रिका तथा एशिया में मिलता है। इसकी ऊंचाई 10 से 20 मीटर तक होती है।

यह हिमालय की ऊंचाई वाले क्षेत्रों में पाया जाता है। यह नम तथा ठंडी जलवायु में उगता है। उत्तरांचल में यह देवदार तथा राई के जंगलों के बीच पाया जाता है। इसकी बृद्धि (बढ़त) धीरे धीरे होती है, इसके कारण इसके जंगल काफी सीमित स्थानों पर ही मिलते हैं।

महत्त्व

आयुर्वेदिक ग्रन्थ चरक संहिता, रामायण व अन्य आदिग्रन्थों में उल्लेखित जड़ी–बूटियों का जो विवरण मिलता है उसमें थुनेर प्रजाति के वृक्ष (टैक्सस बकाटा/टैक्सस बैलिचिअस) की छाल व पत्ती का वर्णन भी मिलाता है।

इस पेड़ में टैक्सस नामक रसायन पाया जाता है। यह रसायन कैंसर की दवा बनाने में प्रयोग होता है। कैंसर के अलावा इस पेड़ का अनेक बीमारियों के निदान के लिए औषधी के रूप में परंपरागत रूप से प्रयोग किया जाता है।

संकटग्रस्त स्थिति

मूल रूप से हिमालय के जम्मू एंड कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, सिक्किम, उत्तराखंड और नॉर्थ ईस्ट में थुनेर के वृक्ष बहुतायत में पाए जाते थे। दवाओं में प्रयोग बढ़ने से इस वृक्ष का अंधाधुंध विदोहन बढ़ा है। वृक्ष काटने तथा उनकी पत्तियों की चोरी से यह वृक्ष संकटग्रस्त स्थिति में पहुंच गया है। हाल के दिनों में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस वृक्ष को रेड लिस्ट में शामिल किया गया है।

ह्रास का कारण

विगत कुछ वर्षों से उत्तरांचल में थुनेर के पेड़ की छाल का अवैध व्यापार तेजी से फलने– फूलने लगा है। जड़ी – बूटियों के बाजार में थुनेर के पेड़ की छाल की मांग अधिक होने के कारण वन तस्करों के द्वारा अवैध रूप से, चोरी छुपे इस वृक्ष की छाल को उतारा लिया जाता है। इससे यह पेड़ भी सूखते जा रहे हैं। इसके कारण अनेक स्थानों पर थुनेर के जंगल अब खत्म होने लगे हैं। यह इस बहुमूल्य वन सम्पदा के ह्रास की आशंकाओं को पुष्ट करता है।

संरक्षण की आवश्यकता

सुरकुट पर्वत स्थित सिद्धपीठ सुरकंडा मंदिर के आसपास थुनेर, राई व मुरेडा का घना जंगल था। सिद्धपीठ सुरकंडा मंदिर में प्रतिवर्ष लाखों श्रद्धालु आते है जो प्रसाद के रूप में थुनेर, राई और मुरेडा के पत्ते और डालियां तोड़कर प्रसाद स्वरुप ले जाते है, इससे पेड़ों का लगातार नुकसान हो रहा है।

विगत वर्षों में इस क्षेत्र के दो सौ से अधिक थुनेर के बड़े पेड़ सूख गए हैं और जो पेड़ बचे हैं, उनकी भी टहनियां लोगों द्वारा तोड़ी जा रही हैं। आज यह यह जंगल समाप्ति की कगार पर हैं। जंगल का लगातार कम होना चिंता का विषय है। इस क्षेत्र के प्राकृतिक वन उपवन का सदुपयोग थुनेर के पुनर्वनीकरण (स्वस्थानिक संरक्षण) के लिए किया जा सकता है।

संरक्षण की संभावना

हाल के दिनों में उपजी जागरूकता और जैव विविधता से युक्त प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की चाह दुनिया भर में बढ़ रही है। आज आवश्यकता इस बात की है कि पीढ़ियों से संरक्षित इन प्राकृतिक धरोहरों की सुरक्षा की जाए। सुरकुट पर्वत स्थित सिद्धपीठ सुरकंडा मंदिर क्षेत्र में थुनेर के पुनर्वनीकरण (स्वस्थानिक संरक्षण) की कोशिशें करनी चाहिए। आस्था के साथ जोड़ कर इस क्षेत्र के प्राकृतिक वन उपवन (देवी की बगिया) का सदुपयोग थुनेर के पुनर्वनीकरण (स्वस्थानिक संरक्षण) के लिए किया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *Arya, K.R., Singh D.C., Tiwari R.C., Naithani H. B. 2016. Ethno-Botanical Identification of Some Wild Herb Species of Surkanda Devi Hill, Uttarakhand; International Journal of Ayurveda and Pharma Research, 4(8):12-15.ISSN: 2322 - 0902 (P)*

2. *Arya, K.R., Agarwal, S.C., 2006.Conservation of threatened medicinal and folklore plants through cultivation in Uttaranchal state. Ethnobotany 18.*
3. *AwuahNyamekye, Samuel.* 2009. *Teaching Sustainable Development from the Perspective of Indigenous Spiritualities of Ghana in Cathrien de Pater & Irene Dankelman (eds) Religion and Sustainable Development Opportunities and Challenges for Higher Education Münster: LIT Verlag.*
4. *Bagnara Milan, S. (*2016). *A world heritage to be shared without prejudice: New linkages and strategies in the management of cultural landscapes. In L. Bassa & F. Kiss (Eds), Proceedings of TCL*2016 *conference on tourism and cultural landscapes: Towards a sustainable approach, Budapest, Hungary,* 2016
5. *Bhakat, R.K., Pandit,P.K.,2003. Role of a sacred grove in conservation of medicinal plants. Indian Forester129.*
6. *Bhakat, R.K.,Sen,U.K.,2008. Ethnomedicnal plant conservation through sacred groves.Tribesand Tribals 2.*
7. *Bhandary, A.J., Kumar, M., Negi, A.K., Todaria, N.P., 2013. Informants' consensuson ethnomedicinal plants in Kedarnath Wildlife Sanctuary of Indian Himalayas. Journal of Medicinal Plants Resaerch 7(4).*
8. *Bisht, S., Ghildiyal, J.C., 2007.Sacred groves for biodiversity conservation in Uttarakhand Himalaya. Current Science 92(6).*
9. *Campolo, D,* 2016*, cultural landscape and cultural routes, Procedia - Social and Behavioral Sciences* 223 (2016)
10. *CE. (*2000). *European landscape convention. Retrieved from http://www.heritagecouncil.ie/ fileadmin/user_upload/Publications/Landscape/E uropean_Landscape.pdf.*
11. *Descola, P. and G. Palsson, (eds).* 1996. *'Introduction' in Nature and Society: Anthropological Perspectives. London and New York: Routledge.*
12. *Gaur, R. D. 1999. Flora of the District Garhwal, North West Himalaya with Ethnobotanical Notes. TransHimalayan Publications, Srinagar, Garhwal.*
13. *Ken Taylor,* 2011*, cultural landscapes: a bridge between culture and nature, international Journal of Heritage Studies, November* 2011 *DOI:* 10.1080/13527258.2011.618246
14. *Malhotra,K.C.,Gokhale,Y.,Chatterjee,S., 2001.Cultural andEcological Dimensions of Sacred Groves in India. Indian National Science Academy and the Indira Gandhi Rashtriya Manav Sangrahalaya, NewDelhi and Bhopal, India*
15. *Milton, K.* 1996. *Environmentalism and Cultural Theory: Exploring the Role of Anthropology in Environmental Discourse. New York and London: Routledge.*
16. *Moore, K. (*2016). *Is landscape philosophy? In G. Doherty & C. Waldheim (Eds), Is landscape…? Essays on the identity of landscape (pp.* 285–302). *Milton Park, Abingdon, Oxon; New York, NY: Routledge.*
17. *Nocca, F.* 2017*, Hybrid Evaluation Tools for Operationalizing UNESCO Historic Urban Landscape Approach; University of Naples Federico II: Naples, Italy,* 2017.
18. *Plieninger, T., D. van der Horst, C. Schleyer, and C. Bieling.* 2014. *Sustaining ecosystem services in cultural landscapes. Ecology and Society* 19(2): 59. *http://dx.doi.org/*10.5751/*ES*-06159-190259
19. *Rao, B. Ravi Prasad, M. V. Suresh Babu, M. Sridhar Reddy, A. Madhusudhana Reddy, V. Srinivasa Rao, S. Sunitha & K. N. Ganeshaiah. 2011. Sacred groves in southern eastern ghats, India: Are they better managed than forest reserves? Tropical Ecology 52.*
20. *UNESCO. (*1992). *Guidelines on the inscription of specific types of properties on The World Heritage List. Retrieved fromhttp://whc.unesco.org/archive/opguide*05-*annex*3*-en.pdf.*